बिहार में दलितों का राजनीतिक उत्कर्ष : एक अध्ययन

समरेन्द्र नाथ विश्वास

बिहार में दलित वर्गों या अनुसूचित जातियों का राजनीतिक पक्ष और गैर–दावा दारी (नन–एसर्सन) का शिकार रहा है। राजनीतिक दल इस वर्ग को चुनावी हथियार के रूप में उपयोग करते रहे परन्तु पिछले दो– तीन आम चुनावों से अब राजनीतिक दल 'सांकेतिक प्रतिनिधित्व' के अतिरिक्त भी उनमें राजनीतिक सम्भावनाएँ पनपने लगे हैं। यही कारण है कि राज्य स्तर पर कई राजनीतिक दल भी गठित हुए जो अनुसूचित जातियों के हितों को प्राथमिकता देकर राजनीतिक सत्ता में भागीदारी का मार्ग प्रशस्त किये। जिसमें बहुजन समाज पार्टी (बी०एस०पी०) का नाम प्रमुख रूप से लिया जा सकता है। अनुसूचित जातियों पर ब०स०पा० का वर्चस्व को बढ़ते देखकर बाबू जगजीवन राम के उत्तराधिकार का दावा करने वाले राम विलास पासवान ने अपनी राजनीति शक्ति का निचले स्तर पर फैलाव करने का रास्ता ढूँढ़ लिया। हालांकि चुनावी सम्भावनाओं पर गैर हरिजन वर्चस्व के बिना कोई असर नहीं प्रतीत हुआ।[13] पिछले वर्षों में जो अनुसूचित जातियों को राजनीतिक रूप से संगठित करने की प्रवृति देखने को मिली वह पहले कभी नहीं मिली थी। बिहार और उत्तर प्रदेश में दलित राजनीति स्पष्ट रूप से चुनावी क्षितिज पर दृष्टिगोचर हुआ है।

इसी कड़ी में बिहार की भूमि से एक परा–राजनैतिक संगठन 'दलित सेना' का गठन हुआ। 20 दिसम्बर 1987 को राम विलास पासवान के नेतृत्व में पटना में आयोजित दलित सेना सम्मेलन द्वारा दलित सेना अस्तित्व में आ गई। सम्मेलन के मंच पर दलितों के अतिरिक्त सवर्णों की भी सहभागिता थी जिसमें चौधरी ब्रह्म प्रकाश, दिग्गविजय सिंह, चन्द्रजीत यादव, के साथ ही सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण यह था कि डॉ० सविता अम्बेडकर ने भी इस पहल में अपना पुरजोर सहयोग दिया।